International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 04, No. 04(I), October - December, 2022, pp. 190-192

मानवाधिकार की वर्तमान प्रासंगिकता

तेजस हिरानी*
डॉ. नागेन्द्र सिंह भाटी**

सार

मनुष्य के भोजन, जीवन, आवास इत्यादि मूलभूत आवश्यकताएं उनके लिए सहज रूप से उपलब्ध हो इस हेतु सम्पूर्ण विश्व में मानवाधिकार संबंधी विचार बड़ी तेजी से फैला है। जैसे–जैसे आधुनिक संसाधनों में वृद्धि हो रही है। वैसे ही मनुष्य की आवश्यकताओं में भी परिवर्तन हुआ है। अतः मानवधिकार का विषय भी विस्तृत होता जा रहा है। प्रस्तुत शोध में मानवाधिकार की वर्तमान प्रासंगिकता पर विशेष अध्ययन किया गया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों को देखा जा सकता है। अनेक ऐसे संगठन हैं जो मानवाधिकार के नाम पर सरकार विरोधी कार्य करने से भी नहीं चूकते हैं। वहीं दूसरी ओर ऐसे संगठन भी हैं जो हरेक परिस्थिति में मानवाधिकार के संरक्षण के लिए प्रयासरत हैं।

शब्दकोशः *मानवाधिकार, मानव उत्पीड़न, वर्तमान परिस्थितियां, मानवाधिकार की उपयोगिता नीति।*

प्रस्तावना

मानवाधिकार का तात्पर्य उन अधिकारों से है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक है। मानवाधिकार व्यक्ति के गरिमापूर्ण जीवन जीने के लिए आवश्यक है। ये अधिकार प्रकृति प्रदत्त है अर्थात् व्यक्ति को जन्म के साथ ही प्राप्त हो जाते हैं नागरिक इन अधिकारों के प्रयोग के लिए किसी सामाजिक या राजनीतिक संस्था के ऊपर निर्भर नहीं रहना पड़ता है बल्कि ये संस्थाएँ इन अधिकारों की सुरक्षा के लिए सदैव तत्पर रहती है। मानवाधिकार के साथ व्यक्ति के स्वतंत्रता और समानता का मूल्य भी जुड़ा हुआ है।श व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रयोग के साथ–साथ दूसरे के अधिकारों के प्रयोग में कोई अवरोध उत्पन्न नहीं करता है। इस प्रकार मानवाधिकार का स्वरूप व्यापक एवं सार्वभौम हैं। इसके अन्तर्गत, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं वैधानिक अधिकार आते है। यहाँ तक कि इसकी परिधि में नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास से सम्बन्धित अधिकार भी शामिल कर लिए गये हैं।

मानवाधिकार लोकतांत्रिक राष्ट्र के विकास का मापदण्ड बन गया है, जो राज्य जितनी अधिक मात्रा में अपने नागरिकों को अधिकार और स्वतंत्रता प्रदान करता है, उसे उतना ही अधिक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। नागरिक, राज्य का अभिन्न अंग होता है. इसलिए राज्य की जिम्मेदारीऔर भी बढ़ जाती है कि वह अपने नागरिकों को अधिक से अधिक सुविधाउपलब्ध कराये।

मानवाधिकार की अवधारणा एक निश्चित समय में अस्तित्व में नहीं आयी है अपितु यह लम्बे समय के विकास का परिणाम है। मानवाधिकारों के संरक्षण सम्बन्धी कानून 12वीं सदी ई०पू० बेबीलोनियन विधियों में मिलता है तथा यूनानी नगर राज्यों में भी सभी नागरिकों के लिए प्राकृतिक एवं नैसर्गिक अधिकार की चर्चा की गई है। सुकरात ने वाक–अभिव्यक्ति के अधिकार को प्राकृतिक अधिकार माना है। उन्होंने कहा कि इस अधिकार को अवरुद्ध करने का किसी को अधिकार नहीं है। जिसके कारण उसे मृत्युदण्ड दे दिया गया है। इसी क्रम में

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान विभाग), जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान।
** सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान विभाग), जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान।

अरस्तु ने भी विधि के शासन के महत्व को स्वीकार करते हुए कहा कि सभी नागरिक विधि के समक्ष समान है और कानून का शासन ही सर्वोत्तम है। अरस्तु ने राज्य की भूमिका को एक कल्याणकारी राज्य के रूप में परिभाषित किया। राज्य को एक ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना चाहिए जिसमें सभी नागरिक आत्म–निर्भर जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सके। अरस्तु के इस कथन का मानवाधिकार के विकास में सराहनीय योगदान है। अरस्तु के दासता सम्बन्धी विचार भी स्पष्ट रूप से मानवतावादी दृष्टिकोण पर आधारित है। अरस्तु के न्याय प्रणाली में व्यक्ति की गरिमा और सम्मान की भावना निहित है।

मानवाधिकार की अवधारणा के विकास में सामाजिक संविदावादी सिद्धान्त का सराहनीय योगदान रहा है। इस सिद्धान्त का मूल तत्व यह है कि आदि काल में जब मानव सभ्यता का विकास नहीं हुआ था तब मनुष्य नैसर्गिक अवस्था में रहता था, उस समय न तो कोई राजा था और नहीं कोई सरकार थी। मनुष्य स्वछन्दतापूर्वक जीवन व्यतीत कर रहा था, ऐसी परिस्थिति के अन्तर्गत मनुष्य का जीवन एकांकी, घृणित, कायर हब्सी गन्दा क्रूर था। ऐसी स्थिति से ऊबकरमनुष्यों ने आपस में मिलकर एक समझौता किया, जिसके फलस्वरूप एक समाज अस्तित्व में आया। इस समाज में सभी मनुष्यों ने एक–दूसरे को आपस में मिलकर आदर, सहयोग एवं शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करने का वचन दिया।

मानवाधिकार एक सीमित सरकार की संकल्पना है। इसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा गरिमा को ध्यान में रखकर सारी राजनीतिक संरचना के कार्य क्षेत्र का निर्धारण किया जाता है। प्रसिद्ध विचारक मॉन्टेस्क्यू को व्यक्ति की स्वतंत्रता से बहुत अधिक लगाव था। मान्टेस्क्यू को सदैव यह भय रहता था कि सरकार निरंकुश होकर स्वतंत्रता जैसे मूल्यों को सीमित न कर दे इसलिए उन्होंने शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार सारी शक्ति तीन संस्थाओं में क्रमशः कार्यपालिका, व्यवस्थापिका, न्यायपालिका में विभाजित करने का सुझाव दिया। अमेरिका का संविधान कुछ इसी तरह की व्यवस्था स्थापित करता है। जे०एस० मिल ने व्यक्ति की स्वतंत्रता को अधिक महत्व देते हुए कहा कि यदि कोई व्यक्ति पागल भी है तो उसके विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाना चाहिए। व्यक्ति की गरिमा एवं स्वतंत्रता, मानवाधिकार के मुख्य सिद्धान्त है।

इसी क्रम में भारत के राष्ट्रपति द्वारा 28 सितम्बर 1993 ई0 को एक अध्यादेश जारी किया गया, जिसे दिसम्बर, 1993 को लोक सभा ने पारित कर दिया तत्पश्चात् 8 जनवरी 1994 को राष्ट्रपति का हस्ताक्षर हो जाने के उपरान्त इस अधिनियम को मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के नाम से जाना गया। इस अधिनियम में क्रमशः 2006 और 2019 में संशोधन किया गया है। इस संशोधन के बाद मानवाधिकार की परिभाषा एवं उसके संरचना में काफी परिवर्तन आया है। यद्यपि आयोग की स्थापना 12 अक्टूबर, 1993 को ही कर दी गयी थी। इस अधिनियम में मानव अधिकार संरक्षण से सम्बन्धित विस्तृत उपबन्ध कियागया है। यह पूरा अधिनियम आठ अध्याय और 43 धाराओं में विभाजित है। धारा 3 से 20 तक राष्ट्रीय मानवाधिकार से सम्बन्धित है। इस अधिनियम के अध्याय 2 की धारा से 11 तक आयोग की संरचना, अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति, पदावधि, सेवा शर्ते इत्यादि से संबंधित है। अध्याय तीन की धारा 12 से 16 तक आयोग के कृत्य और जाँच से सम्बन्धित शक्तियों का प्रावधान है। अध्याय चार की धारा 17 से 20 तक शिकायतों की जांच करना तथा सशस्त्र बलों का प्रयोग तथा आयोग के वार्षिक एवं विशेष रिपोर्ट के बारे में वर्णित किया गया है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग एक अध्यक्ष एवं 12 सदस्यों से मिलकर गठित होगा। इसके अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में पाँच सदस्यी समिति की सिफारिश पर राष्ट्रपति करता है। ये अध्यक्ष एवं सदस्य दोनों अपने–अपने पद ग्रहण की तारीख से पाँच वर्ष या 70 वर्ष तक अपने पद पर बने रह सकते हैं। परन्तु 2019 में संशोधन द्वारा इनकी पदावधि को 5 वर्ष से घटाकर तीन वर्ष कर दिया गया है। अब ये पुर्ननियुक्ति के पात्र होंगे। अध्यक्ष एवं सदस्य स्वयं राष्ट्रपति को त्याग पत्र दे सकते हैं। धार 5 (2) धारा 5 (3) और उपधारा (2) के अन्तर्गत बताये गये आधारों में से किसी भी आधार पर राष्ट्रपति इनको पद से हटा सकता है।

आयोग के कार्य एवं शक्ति के बारे में धारा 12 से 16 के अंतर्गत विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है जिसकी चर्चा तीसरे अध्याय में किया गया है। शिकायत एवं जाँच के दौरान व्यक्ति साक्ष्य के रूप में झूठ या गलत जो भी अभिकथन दिये जाते हैं, उसके विरुद्ध अभियोग चलाने के सिवाय कोई अपराधिक कार्यवाही नहीं की जायेगी और न ही उसके विरूद्ध इसका प्रयोग किया जायेगा ।

अधिनियम की धारा 17 के अन्तर्गत आयोग द्वारा समस्त शिकायतों की जाँच प्रक्रिया के बारे में उपबन्ध किया गया है। इस जाँच प्रक्रिया के उपरान्त धारा 18 के तहत आयोग उल्लंघनकर्ता के विरूद्ध कार्यवाही करने के लिए सरकार को सिफारिश करता है। पीड़ित व्यक्ति को क्षतिपूर्ति हेतु भुगतान करने के लिए अधिकृत कर सकता है या उल्लंघनकर्त्ता के विरूद्ध न्यायालय से आदेश या रिट जारी करने के लिए प्रार्थना कर सकता है। साथ ही साथ आयोग, पीडित परिवार या उसके सदस्यों को भी राहत की सिफारिश करता है। कभी–कभी उदाहरण मिलता है कि सशस्त्र बलों द्वारा मानवाधिकार का उल्लंघन किया जाता है तो आयोग अधिनियम की धारा 19 के तहत पीड़ित व्यक्ति को न्याय दिलाने के लिए कार्यवाही सुनिश्चित करता है। धारा 30 के तहत जिले में मानवाधिकार न्यायालय की स्थापना का प्रावधान करता है। यदि पहले से वहाँ कोई सत्र न्यायालय है तो उसी को मानवाधिकार न्यायालय के रूप में निर्दिष्ट कर दिया जाता है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के गठन हुए लगभग दो दशक से अधिक हो रहा है। इस बीच प्रतिवर्ष आयोग के समक्ष हजारों मानवाधिकार के उल्लंघन से सम्बन्धित मामले आये जिनका प्रभावी ढंग से निराकरण किया गया। इस कार्य के परिणामस्वरूप लोगों में काफी जागरूकता भी आयी। परन्तु इसके बावजूद भी व्यावहारिक स्तर पर मानव अधिकार का उल्लंघन हो रहा है। व्यक्ति का सबसे महत्वपूर्ण अधिकार जीवन का अधिकार और सम्मान प्राप्त करने का अधिकार है परन्तु भूखमरी के कारण वे मूलभूत अधिकारों से वंचित हो रहे है। आदिवासी अमानवीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इन लोगों के पास न रहने का मकान न ही शरीर ढकने को कपड़ा है। इनके पास सरकारी सुविधा सही तरीके से नहीं पहुँच पा रही है। इसी प्रकार महिलाओंके शोषण के कई उदाहरण मिलते हैं। कामकाजी और गैर–कामकाजी दोनो प्रकार की महिलाओं को शोषण का सामना करना पड़ता है। महिलाओं को यौन शोषण के अतिरिक्त अन्य सामाजिक, आर्थिक भेद–भाव का सामना भी करना पड़ता है। इसी प्रकार बाल अधिकार के उल्लंघन का मामला भी देखने को मिलता है। बच्चों को अपने–अपने कार्य क्षमता से अधिक जोखिम भरे कार्य करना पड़ता है। इसका उदाहरण होटल और कल–कारखाने में देखने को मिलता है। समाज के अनुसूचित जाति व जनजाति के लोगों के साथ सामाजिक भेदभाव व अन्याय समाज में दिखाई पड़ता है। इन सब के अतिरिक्त पुलिस द्वारा भी अपराधियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। कई बार पुलिस हिरासत में लोगों की मृत्यु हो जाती है और छोटे–छोटे अपराध के लिए वर्षों से जेल में अमानवीय जीवन व्यतीत करने को मजबूर होते हैं तथा कभी–कभी गैर कानूनी तरीके से इनकी हत्या भी कर दी जाती है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भूमिका अधिक बढ़ जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अय्यर, वी.आर. कृष्णा ह्यूमन राईट्स एण्ड ह्यून रोंगस, बी.आर. पेपर बैंक, न्यू देहली, 1990
2. अंसारी एम.ए. महिला और मानवाधिकार, ज्योति प्रकाशन जयपुर, 2001
3. आनंद वी.के. ह्यूमन राईट्स, इलाहाबाद लॉ एजेंसी, फरीदाबाद, 2001
4. कुमारी रत्ना बी., दी रोल ऑफ एज्यूकेशन इन प्रमोटिंग ह्यूमन राईट्स एज वुमन्स राईट्स इन इंडिया, वुमनस लिंक 2: 78, 1996
5. कश्यप, सुभाष सी. ह्यूमन राईट्स एण्ड पार्लियामेंट, मैट्रोपोलियन बुक कंपनी, न्यू देहली, 1977
6. खोब्रागडे, भगवान – दलित साहित्य विशेषांक, मनोहर प्रकाशन, नागपुर, 2004
7. गुप्त एन.एल., ह्यूमन वेल्यूज इन एज्यूकेशन, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, न्यू देहली, 2000

❖◆❖